BIHAR SHODH SAMAAGAM
Multidisciplinary, Multi-Lingual, Peer Reviewed Open Access Journal
issn : 3048-6971
Vol. 3, Issue 1, January-March 2025
Available online : https://www.biharshodhsamaagam.com/

ऐ लड़की : नारीत्व शक्ति की हुंकार (मातृत्व से नारीत्व तक का सफ़र)

डॉ. शबनम तबस्सुम
डॉक्टरेट इन हिंदी
अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय

"तुम किसी के अधीन नहीं। स्वाधीन हो लड़की, यह तुम्हारी ताक़त है। सामर्थ्य। शक्ति। समझ रही हो न।"1 (कृष्णा सोबती; 'ऐ लड़की', दूसरी आवृत्ति : 2012, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ. 50)

प्रस्तुत पंक्तियां कृष्णा सोबती के उपन्यास 'ऐ लड़की' से उद्धृत है। ये कुछ पंक्तियां हीं उपन्यास में अभिव्यक्त नारीत्व शक्ति को पूर्णता के साथ परिभाषित करती है। 'ऐ लड़की' एक प्रतिकात्मक शीर्षक है; जिसमें नारीत्व शक्ति की हुंकार छुपी हुई है, जो लड़कियों को किसी के अधीन होने से रोकती है। उसे स्वाधीन होकर अपनी ताकत, सामर्थ्य और शक्ति को दुनिया के समक्ष रखने के लिए प्रेरित करती है।

इस वर्ष कृष्णा सोबती जी का जन्मशताब्दी वर्ष भी मनाया जा रहा है। कृष्णा जी का जन्म 18 फरवरी 1925, गुजरात (वर्तमान समय में पश्चिमी पाकिस्तान) और मृत्यु 25 जनवरी 2019, दिल्ली में हुआ। कृष्णा जी 94 वर्ष के लंबे सफर में अपनी कथात्मक अभिव्यक्ति और सौष्ठपूर्ण रचनात्मकता के लिए प्रसिद्ध रहीं हैं। उनकी उत्कृष्ट रचनाशीलता का महत्व इस बात से लगाया जा सकता है कि भारतीय साहित्य के सर्वोच्च सम्मान 'ज्ञानपीठ पुरस्कार' हिंदी साहित्य में अभी तक मात्र दस साहित्यकारों को मिला है; जिनमें सिर्फ दो महिला साहित्यकार- महादेवी वर्मा और कृष्णा सोबती हैं। कृष्णा जी को 2017 में 53 वां ज्ञानपीठ पुरस्कार दिया गया। 1980 में 'जिंदगीनामा' उपन्यास के लिए 'साहित्य अकादमी पुरस्कार और 1996 में साहित्य अकादमी का 'फेलोशीप' भी नवाजा गया। कृष्णा सोबती उन लेखकों में से हैं, जिन्होंने अवार्ड के लिए नहीं लिखा बल्कि सामाजिक विसंगतियों को पलटकर देखने और उनके भीतर के सत्य को उजागर करने के लिए लेखनी चलाई। उनकी रचनाशील व्यक्तित्व में अवज्ञा का स्वर प्रमुख रूप से मुखर हुआ है, जो परम्परागत समाज की जकड़बंदियों को अस्वीकार करती है और एक आधुनिक समाज का निर्माण करना चाहती है; जहां सभी (स्त्री-पुरुष) समान हो, स्वतंत्र हो और सामर्थ्यशील हो। कृष्णा जी उन परम्पराओं और संस्कृतियों का विरोध करतीं हैं, जो नारी की आकांक्षाओं पर नैतिकता का आवरण डालकर उसे ओझल कर देती है। उन्होंने अपने संपूर्ण जीवन में समझौते की राह को कभी नहीं अपनाया। अपने इसी मनोभाव के कारण हिंदी साहित्य में एक अलग स्थान रखतीं हैं। उनकी प्रमुख उपन्यास हैं - डार से बिछुड़ी, मित्रो मरजानी, यारों के यार, सूरजमुखी अंधेरे के, जिंदगीनामा, ऐ लड़की, दिलोदानिश, समय सरगम, और गुजरात पाकिस्तान से गुजरात हिंदुस्तान; प्रमुख कहानी संग्रह - बादलों के घेरे; प्रसिद्ध संस्मरण - हम हशमत (तीन भाग), सोबती एक सोहबत; यात्रा वृत्तांत - बुद्ध का कमंडल : लद्दाख आदि सभी चर्चित रचनाएं हैं। कृष्णा सोबती ने हिंदी कथा साहित्य में अपनी

@2025 Bihar Shodh Samaagam

संयमित और साफ-सुथरी लेखनी के कारण अपना एक नया पाठक वर्ग बनाया। इन्होंने अपने लेखन को कभी स्त्रीवादी मुहावरे से देखा जाना स्वीकार नहीं किया। उनका मानना था कि भारतीय समाज की लाख बंदिशों के बावजूद नारी खुदमुख्तार रहीं हैं। स्त्री होना हीं भारतीय समाज का जीवंत होने का सबूत है।

'ऐ लड़की' उपन्यास से ज्यादा एक लंबी कहानी लगती है या फिर इसे लघु उपन्यास कह सकते हैं। इस उपन्यास में प्रमुख रूप से तीन पात्र हैं- अम्मू (मां), लड़की (बेटी) और सूसन (नर्स)। बाकी कुछ गौण पात्र हैं जो कथा को विस्तार देते हैं। ऐ लड़की कृष्णा जी की सशक्त रचनाओं में से एक है, जिसमें दो अलग व्यक्तित्व और दो पीढ़ियों का अंतर्द्वंद परिलक्षित होता है। इस उपन्यास में स्त्रियों को पारम्परिक छवि को छोड़कर एक निर्भीक और स्वतंत्र व्यक्तित्व अपनाने की हुंकार है। यह हुंकार एक मातृत्व से नारीत्व तक का सफर तय करता है। इस उपन्यास में नारी के दो रूप देखने को मिलता है। पहली, एक मां है जो अपना सारा जीवन परम्पराओं से बंधे समाज में बिताया और दूसरी, वह एक ऐसी नारी है जो सामाजिक बंधनों से मुक्ति चाहती है और लड़की (बेटी) को अपने जीवन से संबंधित उद्धरण देकर आगाह करती है कि तुम अपना जीवन अपने इच्छानुसार जीओ। इन दोनो ही रूपों में कृष्णा जी ने परम्परावादी मातृत्व को पीछे छोड़ नारीत्व को एक अलग पहचान दिलाती हैं। अम्मू चाहती है कि हर स्त्री स्वतंत्र हो। वह अपने मन-मुताबिक काम करें। उसे भी पुरुषों के समान मनुष्य समझा जाए। वो भी समाज का हिस्सा बने। उसे अपने हिसाब से जीने, मरने और काम करने का अधिकार हो। अम्मू लड़की से कहती हैं - "तुम पर कोई रोक-टोक नहीं,जो चाहो,कर लो। एक बात याद रहे कि अपने से भी आजादी चाहिए होती है। देती हो कभी अपने को? तुम्हारी मनमानी की बात नहीं कर रही, कुछ मनचाहा भी कर सकती हो की नहीं।... तुम तो अपने आप में आजाद हो।"2 (वहीं, पृ.58)

यह बिल्कुल सच है कि स्त्रियों को पहले खुद से आजाद होना पड़ेगा, इसके लिए अपने अंदर आत्मविश्वास और सकारात्मकता पैदा करनी होगी। स्वयं को इतना सामर्थ्यवान बनाना पड़ेगा कि वह अपनी शक्ति को पहचान सके; तभी वह अपने परिवार और समाज के समक्ष खड़ी होकर अपने आधिकारों के प्रति अटल रह पाएंगी। कृष्णा जी जानतीं थी कि लड़कियां जिस ज़मीन पर खड़ी होकर अपने अधिकार के लिए संघर्षरत है, उस ज़मीन पर भी पुरुषवादी मानसिकता का आधिपत्य है। इसलिए स्त्रियों को अपनी एक सुरक्षित ज़मीन तैयार करनी होंगी, जिस पर किसी का आधिपत्य न हो। परिवार और समाज के लिए सिर्फ मां, बहन, बेटी, पत्नी और बहु के अलावा खुद का अपना अस्तित्व हो। जिस तरह पुरुषों के लिए 'पुरुषत्व' मायने रखता है, उसी तरह नारी के लिए 'नारीत्व' का महत्व हो।

अम्मू एक ऐसी ही नारी हैं जो मृत्यु शय्या पर लेटी है,

पर अब वह अत्यंत साहसी और निडर हो गई हैं। उनके अवचेतन में द्वन्द्वात्मक संघर्ष चल रहा है। अतीत के इतने लंबे सफर में जो स्वतंत्रता, समानता और आधिपत्य उन्हें नहीं मिल पाया, उसे अपनी भावी पीढ़ी को देना चाहती हैं। लड़की की भविष्य के लिए चिंतित हैं। वो लड़की से कहना चाहती हैं कि परिवार के साथ रहकर, सिर्फ उन्हीं के लिए मत जियो; उनके साथ रहकर स्वयं के लिए

जियो। अर्थात् अपनी एक अलग पहचान बनाओ। अम्मू कहतीं हैं; "संग-संग जीने में कुछ रह जाता है, कुछ बह जाता है। अकेले में न कुछ रहता है और न बहता है।... परिवार के बीचोंबीच छोटी-मोटी कर्मभूमि बिछी रहती है। यही से स्त्री को अपनी और दूसरों की प्रतीति होती है।"3

(वहीं, पृ. 80) दरअसल अम्मू परम्परागत परिवार के निर्वहन में अपना सर्वस्व खो देती हैं। उनका खुद का कोई वजूद नहीं रहता। अम्मू लड़की के साथ अपने जीवन का अनुभव बांटकर अपने 'स्व' की तलाश कर रही है। वह मृत्यु के अंतिम क्षणों में अवसाद मुक्त हो पूर्ण आजादी के साथ मरना चाहतीं हैं। अम्मू कहतीं हैं- "मैं तितली नहीं मांग रही, अपना हक़ मांग रही हूं। मुझे दे दो। ताज़ी हवा में सांस लेने दो।"4 (वही, पृ. 59)

कृष्णा जी चाहतीं थीं कि हमारे समाज की सभी लड़कियां आत्मनिर्भर हो ताकि किसी पुरुष का आधिपत्य न सहना पड़े। अम्मू, अपनी देखभाल के लिए रखी गई नर्स सूसन से कहती हैं - "सूसन, शादी के बाद किसी के हाथ का झूनझूना नहीं बनना, अपनी ताकत बनने की कोशिश करना।"5 (वही, पृ.53) हमारे समाज की सच्चाई है कि स्त्रियां भले हीं आत्मनिर्भर हो गई हैं, पर परिवार में अभी भी उनकी कोई औकात नहीं होती। इस कड़वे सच से कृष्णा जी पूर्ण अवगत हैं, इसीलिए अम्मू के माध्यम से लड़कियों को आगाह करतीं हैं कि 'अपनी ताकत खुद बनो'। कृष्णा जी उपन्यास में कहतीं हैं - "मां की स्थिति परिवार में केवल दासी की है। उसका परिवार में कोई अस्तित्व नहीं। उसे दुख है कि मां पैदा करती है। पाल पोसकर बड़ा करती है। फिर उसकी कुर्बानी। मां को टूकड़े में बांटकर परिवार उसे यहां-वहां फैला देता है। कारण तो यही न, समूची रहकर कहीं उठ खड़ी न हो।"6 (वही, पृ.74) अम्मू को अफ़सोस है कि वो जीवन में कुछ हासिल नहीं कर पाई। इसका प्रमुख कारण था कि वह स्वावलंबी नहीं थी, इसीलिए अपने अंदर की सामर्थ्य और शक्ति को नहीं पहचान पाई। इसलिए अम्मू अपने अनुभव के द्वारा देश की तमाम लड़कियों को आत्मनिर्भर होने का आह्वान करती है।

अम्मू के जीवन की दास्तां सुनकर लड़की आहत होती है और फैसला करती है कि वह शादी नहीं करेगी। यह बात सुनकर अम्मू चिंतित होती है कि मेरे बाद वो बिल्कुल अकेली हो जाएगी। लड़की को समझाने की कोशिश करती है- "शादी न करना इसका कोई हल नहीं है, बल्कि स्त्री होना, सृष्टि की शाश्वत सच्चाई है। "बेटी के पैदा होते हीं मां सदाजीवी हो जाती है। वह कभी नहीं मरती। वह निरंतर है, वह आज भी है, कल भी रहेगी। मां से बेटी तक। बेटी से उसकी बेटी तक...अगली से भी अगली। वह सृष्टि का स्रोत है।"7 (वही, पृ. 42) संसार स्त्रियों के बिना नहीं चल सकता है; इस सच्चाई से पुरुष समाज अवगत है। पुरुष भले हीं स्वयं को परम समझता हो, पर उस पुरुष को 'पुरुष' बनाने में कहीं न कहीं स्त्री का ही हाथ होता है। यदि हमारे समाज से पुरुष वर्चस्ववादी मानसिकता को बदलना है तो बचपन से ही एक 'मां' के रूप में स्त्री को व्यवहारिक धरातल पर लड़का और लड़की दोनों की परवरिश एक जैसी करनी पड़ेगी। लड़कों को एहसास दिलाना पड़ेगा कि स्त्रियां भी तुम्हारी तरह हीं एक मनुष्य है। दोनों का समान अस्तित्व है। दोनों में से किसी एक बिना सृष्टि नहीं चल सकती।

किसी भी समाज में परिवार को सुचारू रूप से चलाने के लिए आवश्यक है कि पति-पत्नी दोनों को समान महत्व दिया जाए। यदि पति चाहता है कि पत्नी प्यार करे, सम्मान दे, सहयोग करें, समर्पित रहे; तो यह सारी चीजें समान रूप से पति पर भी लागू होना चाहिए। पर हक़ीक़त में ये सारी शर्तें सिर्फ स्त्रियों पर लागू होता है, पुरुषों पर नहीं। यही कारण है कि आज स्त्रियां समाज के हर क्षेत्र में कार्यरत है और स्वावलंबी भी है, पर पारिवारिक स्तर पर पराश्रित एवं पराधीन हैं। हर एक निर्णय के लिए पति की स्वीकारोक्ति चाहिए होती है। आलोचक रेखा सेठी का मानना है- "किसी के अधीन न होना भी ताकत है, सामर्थ्य है।"8 (https://samalochan.com>Krishna sobti: lekhan aur narivad)

कुछ विद्वानों का मानना है कि 'ऐ लड़की ' आत्मकथात्मक लघु उपन्यास है, जिसमें मां-बेटी अर्थात् कृष्णा सोबती और उनकी मां का संवाद है। कृष्णा जी इस उपन्यास को अपनी मां की मृत्यु के बाद लिखा था। इस उपन्यास का प्रकाशन 1991 में हुई थीं। उस समय तक स्त्रियां पारिवारिक बंधनों में ही जी रहीं थीं। उस वक्त हर मां अपनी लड़कियों को यही सीख देती थी कि 'ससुराल हीं लड़की का घर होता है। उनके साथ सामंजस्य बिठाकर वहीं रहना होगा।' उस दौर में कृष्णा जी का यह उपन्यास एक नये कलेवर के साथ उपस्थित होता है। जब एक मां अपनी लड़की से कहती है- तुम आजाद हो, तुम सामर्थ्य हो, तुम अपनी जिंदगी अपनी मर्जी से जियो।

आज की मां यह नसीहत दे सकतीं हैं, क्योंकि अब वह स्वतंत्रता, समानता और अस्मिता के मायने भलिभांति समझ रही हैं, पर उस समय ऐसा मुमकिन नहीं था। कोई भी साहित्यिकार सिर्फ अतीत और वर्तमान को ध्यान में रखकर नहीं लिखता, बल्कि उनकी रचनाएं भविष्योन्मुख होती हैं। कृष्णा जी को पता था कि स्त्रियां अब सजग हो रही हैं। वह भी बदलाव चाहती हैं। कृष्णा जी की नायिका अम्मू चेतन-अवचेतन मन के अंतर्द्वंद्व में डूबती -

उतरती रहती है। अम्मू के संवाद उनके भीतर चल रही उथल-पुथल को बयां करती है। वो अपने लंबे जीवन में खुलकर नहीं जी पाईं, उसकी कसक आजीवन बनी रहती है, जिसकी वजह से वह बहुत चिड़चिड़ी हो चुकी हैं। अम्मू कहतीं हैं- "इस परिवार को मैंने घड़ी मुताबिक चलाया,पर अपना निज का कोई काम न संवारा। लड़की, इस समय इस बात का बहुत कष्ट है मुझे।"9 (कृष्णा सोबती; 'ऐ लड़की, पृ.58) अम्मू के संवाद हर जगह दोहरे मायने रखतें हैं, क्योंकि वह चाहतीं हैं कि जो जीवन उन्होंने जिया, वह जीवन लड़की न जीये। अम्मू यहां विक्षिप्तावस्था में ही सही, लेकिन अपने अधिकारों की मांग कर रही हैं।

कृष्णा सोबती इस उपन्यास में न तो मां का कोई नाम दिया है और न हीं बेटी का, ताकि पाठक इसके शीर्षक पर चौके और सोचने पर मजबूर हो। हमारे आसपास कितनी हीं स्त्रियां है, जो उम्र गुजार देती हैं, लेकिन समाज उसे उसके नाम से नहीं जानता। वो जानता है, फलां साहब की मां, बीवी, बेटी, बहन, बहू आदि। 'लड़की' एक शांत-सहज और एक जिम्मेदार चरित्र है। वह अपने मां के प्रति जिम्मेदारी को समझती है। मां अक्सर खीझ जाती है, फिर भी वह बुरा नहीं मानती। लड़की जानती है कि मां के और भी बच्चें हैं, जिनकी याद सताती है। एक और बड़ी बेटी, बेटा, बहु, नाती, पोते सभी हैं। सब अपने-अपने जिंदगी में व्यस्त हैं; मां की परवाह

किसी को नहीं है। ये छोटी लड़की है और मां को अपने पास रखतीं हैं। एक नर्स के साथ मिलकर उनकी सारी जिम्मेदारियों को पूरा करतीं हैं। अंतिम समय में अम्मू बेटे को बहुत याद करती हैं, जिसने उनके बारे में कभी सोचा ही नहीं। वो कहते हैं न, 'बेटी कितना भी कुछ कर दे,पर बेटे से विशेष लगाव होता है मां को।' लड़की इस बात का बुरा नहीं मानती है। वो जानती है कि ये भी हमारे समाज की रीत है और अम्मू भी उसी समाज का हिस्सा है, बल्कि लड़की समाज को यह साबित कर दिखाती है कि मां-बाप की जिम्मेदारियों का निर्वहन बेटे से कहीं अधिक एक बेटी कर सकती है, वो भी पूरी तन्मयता के साथ। अपनी मां के जीवन से सीख लेते हुए, आजीवन विवाह न करने का फ़ैसला लेती है और पुरुष-सत्ता को चुनौती देती है कि विवाह करके न तो किसी पुरुष के अधीन होगी और न हीं उसका वंश चलाने के लिए संतानोत्पत्ति करेगी। इस तरह कृष्णा सोबती ने लड़की के रूप में एक ऐसी आधुनिक स्त्री गढ़ा है, जो सदियों से ढोई जा रही पितृसत्तात्मक परम्परा को नहीं ढोएगी। वह जीवन अपने शर्तों पर जीएगी। पुरुष- वर्चस्ववादी मानसिकता के कारण हीं देश में अविवाहित महिलाओं की संख्या बढ़ती जा रही हैं। एक सर्वेक्षण के मुताबिक- "अविवाहित महिलाओं का अनुपात 2011 में 13.5% था, जो 2019 में बढ़कर 19.9% हो गया।"10 (www.livehindustan.com) सोचिए अब इन पांच सालों में बढ़कर कितना हो गया होगा?

निष्कर्षत: कृष्णा सोबती ने 'ऐ लड़की' उपन्यास के माध्यम से स्त्रियों की दो पीढ़ियों के अंतर्द्वंद्व को दिखाया है, जो पुरुष-सत्तात्मक समाज की जकड़बंदियों से निकलकर एक स्वतंत्र सत्ता स्थापित करने के लिए बेचैन है। इस उपन्यास में कृष्णा जी का विद्रोही स्वर देखने को मिला है। उपन्यास में 'ऐ लड़की' संबोधन, एक मां की हुंकार है; देश की तमाम लड़कियों के लिए, जिन्हें अपने जीवन की नई शुरुआत करनी है। 'ऐ लड़की'! अपने आप में होना, परम होना है, श्रेष्ठ होना है'। इस तरह इस उपन्यास में एक स्त्री अम्मू के रूप में, मातृत्व से नारीत्व तक का सफ़र तय करती है। आज के संदर्भों में यह उपन्यास बेमिसाल है, जहां स्त्री अपने व्यक्तित्व की खोज करते हुए नारीत्व शक्ति को अपनी पहचान बनाना चाहतीं हैं।